राष्ट्रीय
सहारा
नयी दिल्ली, बृहस्पतिवार, 8 अक्टूबर, 1998

रंगमंच

वे आये, हंसे-हंसाये और रुला कर चले गये...

खुला मंच है। एक-एक करके बस्ती के लोग और बच्चे आते हैं। फिर तब्दील हो जाते हैं कई-कई तरह की इमेज में। एक पूरा समाज उभर आता है। पुलिस होती है बड़ों और छोटो के बीच दीवार बन कर। बड़ा उद्योगपति कुर्सी के ऊपर खड़ा होता है रुपयों की गड्डी लेकर। डाक्टर, नेता, पुलिस अधिकारी, बड़े अफसर सब अपनी -अपनी कुर्सियां सम्भाले होते हैं। ये सब चारदीवारी के अन्दर हैं। इस चारदीवारी के अन्दर जाने की कोशिश करते हुए कुछ और लोग होते हैं। एक तवायफ जिसे अन्दर जाने दिया जाता है। परन्तु अपनी-अपनी भूख शांत करने के बाद उसे बाहर फेंक दिया जाता है। और भी लोग हैं दीवार के इस पार। एक कुआरी मां है। जंगलों से लकड़ी बीन कर लाते हुए एक आदिवासी दम्पति हैं, एक ढोलकिया है, एक चर्मकार है। शराबी बाप से पिटती एक नादान बिटिया है। दो मासूमों की शादी करवाते हुए लोग है। पढ़ते हुए बेटे हैं। पढ़ने को ललचाती हुई बेटियां हैं। यह इमेंज स्वयं बस्ती के लोगों ने बनायी है। यह उनकी अपनी तस्वीर है। अपने गांव की अपने समाज की।

फ्रेंच में बात करता हुए निदेशक आता है। राजस्थान विश्वविद्यालय के फ्रेंच विभाग का एक छात्र अजय हिंदी में अनुवाद करता है। वह कहता है आपने तस्वीर पहचानी। दर्शकों ने आवाज दी-हां। निदेशक पूछता है बताइये कहां क्या हो रहा है। दर्शकों में से लोग उठते हैं। बताते हैं कि कहां क्या हो रहा है। अब निदेशक पूछता है यही तस्वीर है आपके समाज की। आवाज आती है-हां । आप इसे ऐसा ही बनाए रखना चाहते हैं। आवाज आती है- नहीं। तो बदलिए इस तस्वीर को। सबसे पहले क्या बदलना चाहेंगे ?

एक बच्चा उठता है। तवायफ का हाथ पकड़ कर दीवार के अन्दर लाता है। जिस व्यक्ति ने उसके साथ सम्बन्ध बनाया था उससे शादी करवाता है। स्वयं उसका बच्चा बन जाता है। दूसरा आता है उस बच्ची की जगह लेता है जो किताब देख कर ललचा रही है। वह किताब छीनना चाहता है। स्कूल जाना चाहता है, जा नहीं पाता। पिता ने किताब को पैरों से दबा रखा है। वह सामाजिक कार्यकर्ता को बुलाना चाहता है। मां के पांव पकड़ता है। वह चाहता है कि वह बच्ची पढ़े। करीब-करीब हर दर्शक उठ जाता है मंच पर बनी शोषण की यह तस्वीर बदलने के लिए। सभी अपने-अपने हिसाब से कोशिश करते रहते हैं और ढाई घंटे बीत जाते हैं। एक संदेश के साथ नाटक खत्म हो जाता है कि तस्वीर बदलेगी ज़रूर। पर अथक प्रयासों के बाद! मंच खाली होते वक्त हर दर्शक अपने आपको मंच पर या मंच के आस-पास पाता है। शोषक और शोषित के बीच की दीवार ढहे न ढहे दर्शक और कलाकार के बीच की दीवार ढह चुकी होती है। दर्शक दीर्घा खाली हो चुकी होती है।

यह निदेशक है फ्रांस के 'कारवां' नाट्य संस्था के जॉ पियरे बेंसार्ड। अपने बारह साथियों के साथ वे पिछले दिनों जयपुर आये। सभी बारह मुख्य तौर पर क्लाउन (जोकर) हैं और क्लाउन थियेटर करते हैं। लेकिन पारम्परिक थियेटर तथा पार्टिशिपेटिंग थियेटर भी करते हैं। 'थियेटर फॉर आप्रेश्ड' नाम से इन्होंने एक खास शैली ईजाद की है। इसके जरिये ये थियेटर को आम लोगों की अभिव्यक्ति का जरिया बनाना चाहते हैं। उनके लिए बोलना तो चाहते हैं जो बोलना तो चाहते हैं लेकिन बोल नहीं पाते हैं। जयपुर की एक सामाजिक संस्था जन कला साहित्य मंच के बुलावे पर जयपुर आये थे। ये 'करवा' नाट्य संस्था के संस्थापक और निदेशक हैं। अब तक बारह देशों में अपनी खास शैली थियेटर ऑफ ऑप्रेश्ड' के जरिए नाटकों तथा वर्कशॉप के आयोजन कर चुके हैं। इमेज शैली में प्रस्तुत इन नाटकों की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे समाज की एक वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करने के बाद दर्शकों को ही आमंत्रित करते हैं और कहते हैं कि अपनी इच्छा के मुताबिक अपने सपनों के मुताबिक वे इस इमेज को बदलें। इससे भी बड़ी बात यह होती है कि इमेज को सपनों में नहीं बदलना होता हैं, जमीन पर बदलना होता है। दर्शको में से जो लोग उठकर तस्वीर बदलने आते हैं, उनसे कहा जाता है कि पहले वे उनकी जगह लें फिर बताये कि इस बेजान अमानवीय इमेज को कैसे इन्सानी तस्वीर में, जो उनका अपना सपना है बदल सकते हैं। जयपुर के लोगों ने पहली बार इमेज शैली के नाटक देखें और इसमें हिस्सा भी लिया। खूब मजा आया उन्हें।

जयपुर की कलाकार बस्ती में जॉ पियरे बेंसार्ड

बहुत मेहनत की इसके लिए इन्होंने जन कला साहित्य मंच के साथ मिल कर। जयपुर की बस्तियों से, राजस्थान विश्वविद्यालय के फ्रेंच विभाग के छात्रों को और जन कला विकास मंच कार्यकर्त्ताओं को इकट्ठा किया और सिखाया क्लाउन बनना। हंसना-हंसाना। अपने दुखों को दूसरों के दुखों में भूला देना। दूसरों की खुशी में अपने लिए ढेर सारी खुशियां सहेज लेना। आंखों ही आंखों में औरों को अपना बना लेना।

बस्ती के बच्चों ने खूब आनंद उठाया क्लाउन बन-बना कर। एक माह तक सीखने-सीखाने का यह दौर चलता रहा। कभी जयपुर की बस्तियों में, तो कभी नाट्य मंचों पर। कलकत्ता की एक नाट्य संस्था जन मंच भी इसमें शामिल हुई। जन मंच पार्टिशिपेटरी 'थियेटर फॉर आप्रेश्ड' शैली में थियेटर करते हैं। आखिरी दिन,बारह सितम्बर को उन्होंने जवाहर कला केंद्र में इमेज थियेटर के जरिये पब्लिक शो भी किया। फ्रांस के जाने-माने नाट्य निदेशक जॉ पियरे बेंसार्ड के निर्देशन में हुए इन शो में आम दशकों ने भी जम कर हिस्सा लिया। 'कारवां' के निदेशक, जो फ्रेंच विश्वविद्यालय में फ्रेंच के प्रोफेसर भी रह चुके है, जाते-जाते भावुक हो उठे। कहने लगे 'कितने अनुशासित हैं गंदी बस्तियों में रहने वाले ये बच्चे, इनके अन्दर कुछ कर गुजरने की कितनी आग है हर देश और समाज में इस शैली में ज्यादा से ज्यादा शो करने की जरूरत है। चाहे पूरब हो या पश्चिम उन्होंने कहा कि यह सिर्फ नाटक नहीं है, आन्दोलन है। इसमें दर्शक सिर्फ दर्शक नहीं होता। उसे सोचना होता है और शरीक भी होना होता है।

फ्रांसिसी और भारतीय कलाकार 'थियेटर फॉर आप्रेश्ड' में

कैसा लग रहा है एक माह इस गुलाबी शहर की बस्तियों में बच्चों के साथ नाटक करने के बाद अब अपने देश लौटना इस सवाल के जवाब में वे कहते हैं, 'न तो कला देश की सीमाओं से बंध कर रह सकती है न ह इन्सानियत और इन्साफ की आवाज । आज मैं बावन साल का हो चुका हूं। चाहता जितनी जल्दी हो सके जितन कुछ हो सके समाज का दे जाऊं बहुत कुछ लिया है इ समाज से।' देश की सीमा इन्सानी समाज को टुकड़ों में बांट सकी हैं, न बांट सकेंगी। हर उस गली कूचे गांव ढाणी जाना चाहूंगा जहां शोषित जन है फर्क नहीं पड़ता कि वह हिन्दुस्ता है या पाकिस्तान, जर्मनी है फ्रांस। हम तो एक ही सपने के साथ सोते हैं और उसी के सा जागते हैं सबके हाथ में काम हो सबको पेट भर रोटी मिले। सबक जुबान में आवाज हो। इसीलि हमारे नाटकों में कलाकार क और दर्शक ज्यादा कुछ करते ज्यादा बोलते हैं। जॉ पियरे पि आयेंगे बच्चों के साथ खेलने खाने, हंसने गाने और थिये करने।

● मणिमाल